P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-8* ISSUE-1* September- 2020
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एवं विश्व बैंक

New International Economic Order and World-bank

Paper Submission: 12/09/2020, Date of Acceptance: 26/09/2020, Date of Publication: 27/09/2020

अशोक कुमार महला
सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान
राजकीय कला महाविद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

सारांश

विश्व की तीन महत्त्वपूर्ण घटनाओं समाजवादी क्रांति, समाजवाद का विस्तार एवं दैतान्त के उदय के कारण यह कहा जाने लगा कि न्याय व लोकतांत्रिक आदर्शों के आधार पर आर्थिक सम्बन्धों का निर्धारण किया जाना चाहिए। इसी क्रम में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक नयी अवधारणा 'नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था' का उदय हुआ। महायुद्ध के बाद अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था स्थापित करने का सर्वप्रथम प्रयास ब्रेटनवुड्स में किया गया था। ब्रेटनवुड्स की 'आर्थिक व्यवस्था' अमरीका की ही एक योजना थी जिसे अन्य प्रमुख औद्योगिक देशों ने समर्थन दिया। इनका उद्देश्य इस अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के माध्यम से अपनी हित साधना था न कि वैश्विक हितों की साधना करना। एक तरह से धनी देशों द्वारा स्वयं के लिए तैयार की गयी यह अर्थव्यवस्था अमीर और गरीब देशों के बीच असमानता एवं निर्भरता के सम्बन्धों को संस्थागत रूप में जारी रखने के हिसाब से तैयार की गयी थी जिसके मुख्य औजार विश्व बैंक व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष रहे। इसी कारण विकासशील देश वैकल्पिक अर्थव्यवस्था के निर्माण की बात कहने लगे थे एवं एक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को स्थापित करने की सोचने लगे।

Due to occurrence of three important incidents i.e. socialist revolution, its expansion and Detante. It was assumed that justice and democratic ideals were the foundation for deciding factors of economic relations. Consequently an inception of a new concept NIEO took place in international politics. After World War –II first attempt to establish international economy was made at Brattenwoods. The economic system of Brattenwoods was a planning of USA, supported by prominent industrial countries of the world. The aim of developed countries through the platform of international economic order was to meet selfish ends instead of serving global interests. Through this medium the developed countries tried to widen the disparities between developed and developing countries , in order to promote future dependency of developing countries on developed nations. Prominent instruments to meet this motive of developed countries was the World bank and IMF. Due to this reason the developing countries started looking for alternative economy and establishment of NIEO.

मुख्य शब्द : नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, निओ, ब्रेटनवुड्स, व्हाइट योजना, कीन्स योजना, यूनीनास, ब्रेटनवुड्स सिस्टरस, बहुराष्ट्रीय निगम, उत्तरी गोलार्द्ध, दक्षिणी गोलार्द्ध, भूमण्डलीकरण, आत्मनिर्भर विकास, प्रभुसता सम्पन्न समानता, परस्पर–निर्भरता, विकासशील राष्ट्र, विकसित राष्ट्र, राष्ट्रीयकरण, विश्व बैंक व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष।

New International Economic Order, NIEO, Brattenwoods, White Plan, Keens Plan, UNINAS, Brattenwoods Sisters, Mncs, Northern Hemisphere, Sothern Hemisphere, Globalisation, Self-Dependent Dependent, Sovereign-Equality, Mutual-Dependency, Developing Countries, Developed Countries, Nationalisation, World Bank And IMF.

प्रस्तावना

द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद जिस व्यापार–मुद्रा व्यवस्था का निर्माण किया गया वह एक उदारवादी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था का पक्ष पोषण करती है जिसमें इस बात पर बल दिया गया कि वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यस्था मे राज्य का हस्तक्षेप सीमित रहेगा। इसमें राष्ट्रीय सीमाओं से दूर वस्तुओं और पूंजी का मुक्त प्रवाह होगा। इस व्यवस्था में गैट, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व विश्व बैंक ने अपनी संस्थागत भूमिका निभाई। चूंकि अमेरिका ने युद्ध से पूर्व ही ऐसी योजनाएं बनाना प्रारम्भ कर दिया जिनसे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अधिक एवं स्वतंत्र प्रवाह हो सके। अमेरिका में एच. डी. व्हाइट व हाल के नेतृत्व में पुनर्रचना व विकास के लिए बैंक आदि विषयों पर चर्चा की गयी[1] एवं इन्होंने

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से सम्बन्धित दिसम्बर, 1941 में संयुक्त राष्ट्र स्थायित्व के लिए अमेरिका के सुझाव नाम से एक स्मृति पत्र प्रस्तुत किया, जिसको व्हाइट योजना या पेपर के नाम से 10 जुलाई, 1943 को प्रकाशित किया गया जिसमें एक अन्तर्राष्ट्रीय स्थायीकरण एंजेसी का निर्माण भी शामिल था।[2]

दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक व वित्तीय समस्याओं ब्रिटेन में विचार–विमर्श प्रारम्भ हुआ था। 1942 में वाशिंगटन में ब्रिटिश दूतावास में राज्य एवं कोष विभागों को अन्तर्राष्ट्रीय संघ के प्रस्तावों से सम्बन्धित एक योजना की प्रतिलिपियाँ दी गयी, जो प्रस्ताव कीन्स द्वारा तैयार किए गए थे, जिनको कीन्स योजना के नाम से जाना गया।[3] कीन्स योजना में इसे बैंकर कहा गया व व्हाइट योजना में इसे यूनीनास कहा गया।[4] इसके बाद 1944 में एक सम्मेलन के लिए रूजवेल्ट ने 44 देशों के प्रतिनिधि आमंत्रित किए[5] जो संयुक्त वक्तव्य पर आधारित योजना पर विचार करने के लिए ब्रेटनवुड्स में होने वाला था। ब्रेटनवुड्स के सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक की स्थापना की गयी।[6] इस सन्दर्भ में यंग ने कहा कि, ''अन्तर्राष्ट्रीय बैंक का विकास भी अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के साथ हुआ।''[7]

द्वितीय महायुद्ध के बाद की इस उदार अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में वैश्विक स्तर पर विकासशील देश, विकसित देशों द्वारा उपेक्षित रहे जिसके कारण उत्तर–दक्षिण संवाद की शुरूआत हुई। उत्तर–दक्षिण संवाद की पृष्ठभूमि में ही संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्ताव पर अंकटाड की स्थापना की गई। अंकटाड के साथ–साथ उत्तर–दक्षिण की बढ़ती खाई को कम करने के लिए उत्तर–दक्षिण सहयोग पर भी बल दिए जाने की मांग की गई।

एक प्रकार से द्वितीय महायुद्ध के बाद जिस वैश्विक परिदृश्य का निर्माण हुआ उसमें अमेरीका ने उदारवादी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के निर्माण में अपनी नेतृत्वकारी भूमिका निभाई। दूसरी ओर ब्रेटनवुड्स व्यवस्था, उत्तर–दक्षिण संवाद, मुद्रा व व्यापार व्यवस्था एवं दक्षिण की एक न्यायपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग आदि के परिणामस्वरूप अंकटाड की स्थापना, नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग, दक्षिण–दक्षिण का आपसी सहयोग, नव–उदारवादी व्यापार व्यवस्था, बौद्धिक संपदा अधिकार, पेटेन्ट व्यवस्था के मुद्दे, पर्यावरण के मामले आदि की आवश्यकता महसूस हुई। इसी क्रम में संयुक्त राष्ट्र के छठे अधिवेशन में 1 मई 1974 को नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का प्रस्ताव संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा पारित किया गया।[8]

अतः यह कहा जा सकता है कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् जिस उदारवादी वैश्विक आर्थिक व्यवस्था का निर्माण अमरीकी नेतृत्व में विकसित देशों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थाओं के माध्यम से किया गया उसी के परिणामस्वरूप नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता महसूस हुई।

यद्यपि देखा जाए तो द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ही यह स्पष्ट को गया था कि युद्धोत्तर काल मे ही अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा मामलों का नियमन निश्चित रूप से किया जाएगा। अतः अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा व व्यापार व्यवस्थाओं के प्रबंधन के लिए ब्रेटनवुड्स व्यवस्था की स्थापना की गई। इस व्यवस्था ने बड़े–बड़े औद्योगिक राष्ट्रों के मध्य वित्तीय व वाणिज्यिक संबंध बनाने के लिए नियमों का निर्माण किया। यह व्यवस्था विश्व के इतिहास में पूर्णरूप से समझौते पर आधारित मुद्रा व्यवस्था का प्रथम उदाहरण मानी जाती है, जो आत्मनिर्भर राष्ट्रों के मध्य मुद्रा संबंधों का संचालन करती थी। मूलरूप से अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियमन के लिए नियमों, संस्थाओं व प्रक्रियाओं की व्यवस्था को निर्मित करने के साथ–साथ ब्रेटनवुड्स के निर्धारकों ने आई बी आर डी एवं अन्तर्राष्ट्रीय बैंक की स्थापना की। मुख्यतः इन संस्थाओं का उद्देश्य विश्व युद्ध में ध्वस्त राष्ट्रों के पुनर्निर्माण में आर्थिक सहायता देना, अल्प विकसित राष्ट्रों में गरीबी से लड़ने हेतु योजनाओं में मदद करना रहा।

उपर्युक्त व्यवस्थाएं विकसित देशों का विकासशील देशों के शोषण का हथियार बनने लगी। इससे निर्मित नव उदारवादी व्यवस्था अधिकांश विश्व के लिए सार्थक सिद्ध नहीं हुई। उत्तर–दक्षिण में विषमता की रेखा बढ़ती चली गयी। असमान व्यापारिक विनियम द्वारा सुविधा सम्पन्न ने सुविधाहीन के बाजारों में अपनी जड़ें जमा ली और आर्थिक प्रक्रियाओं को संस्थागत स्वरूप देकर उनका शोषण करने लगे।

परिणामतः व्यापार की शर्तों में सुधार, विकास सहायता में वृद्धि, विकसित देशों की प्रशुल्क दरों में कमी करने व अन्य तरीकों से अपने हितों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से विकासशील देशों ने एक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना की आवश्यकता महसूस की। विकासशील देशों ने नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को शोषणकारी प्रवृति पर रोक लगाने के लिए एक आन्दोलन का स्वरूप देने का निश्चय किया। विकासशील देश समकालीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुरक्षित स्वरूप प्रदान करना चाहते थे क्योंकि विकासशील देशों का मानना था कि स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्थाओं में उनकी अर्थव्यवस्थाओं के पतन को रोकने का श्रेष्ठ विकल्प नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था ही है। विकासशील देश नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के माध्यम से उस आर्थिक शोषण का विरोध करना चाह रहे थे जो विकसित देशों द्वारा किया जा रहा था। वे अपने संसाधनों एवं बाजारों व अर्थव्यवस्थाओं के शोषण की प्रवृत्ति पर रोक लगाना चाहते थे। वे नव उपनिवेशवादी युग का अन्त करना चाहते थे।

इसके विपरीत विकसित देश स्थापित मजबूत आर्थिक व्यवस्था व अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों में अपनी भूमिका को कम करने के लिए तैयार नहीं थे। विकसित देश नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को स्वयं के लिए हानिकारक मानते थे। वे अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं पर अपनी पकड़ ढीली नहीं करना चाहते थे। उनका मानना था कि वे मौजूदा स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था व अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं का संचालन करने में सक्षम हैं तथा दक्षिण के हित में इसी में संशोधन किया जा सकता है। परिणामतः नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता के साथ ही उत्तर–दक्षिण विवाद भी शुरू हो

गया, जिसके प्रत्युत्तर में दक्षिण–दक्षिण संवाद व सहयोग की भी आवश्यकता हुई।

नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग में निम्न बातें शामिल हैं–

1. विकासशील देशों की यह मांग कि उनका आर्थिक विकास पूंजीवाद देशों की स्वेच्छा पर निर्भर न रहे।
2. बहुराष्ट्रीय निगम विकासशील देशों को कच्चा माल उत्पन्न करने वाले उपनिवेश नहीं माने।
3. विश्व आर्थिक व्यवस्था का संचालन एक–दूसरे की सम्प्रभुत्ता का आदर करते हुए हो।
4. कच्चे माल पर उत्पादक राष्ट्र का पूर्ण अधिकार हो।
5. एक न्यायपूर्ण व समता आधारित वैश्विक आर्थिक ढ़ांचे का निर्माण हो, आदि।

अध्ययन के उद्देश्य

1. विकासशील राष्ट्र जो अपने आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में कदम उठा चुके हैं, की समस्याओं, संभावनाओं एवं पारस्परित सहयोग के अलावा अपनाई विधियों का अध्ययन आवश्यक है।
2. विकासशील देशों के संगठनों की स्थापना व उनके उद्देश्यों तथा सफलता की संभावनाओं का अध्ययन किया जाना।
3. विकसित व विकासशील राष्ट्रों के बीच समानता व न्याय पर आधारित नवीन आर्थिक सम्बन्धों का अध्ययन आवश्यक है।
4. ब्रेटनवुड्स में प्रस्तावित 'आर्थिक व्यवस्था' के विकल्प में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को स्थापित करने का विचार का आना।
5. अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में द्वितीय महायुद्ध के बाद आर्थिक विकास विश्व के सामने एक चुनौती का अध्ययन आवश्यक है।
6. द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उपनिवेशवाद की समाप्ति के दौर में विश्व बैंक में विकासशील राष्ट्रों की सदस्यता बढ़ती गई, किंतु इन संस्था द्वारा वित्तरित की जानेवाली धनराशि किन देशों और किन उद्देश्यों तथा किन शर्तों पर वित्तरित की जाएगी का अध्ययन आवश्यक है।

परिकल्पना

परिकल्पना के रूप में जिन अनुत्तरित प्रश्नों एवं विचारों को व्याख्या प्रदान किया जाना निर्धारित किया गया है, उसकी व्याख्या की जा सकती है।

1. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता ।
2. तीसरी दुनिया के देश ब्रेटनवुड्स संस्थाओं को समाप्त करके नई संस्थान के विकास पर बल देने लगे।
3. विश्व अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन कर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में विकासशील राष्ट्रों की भागीदारी बढ़ाने व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा संस्थाओं के पुनर्गठन होने पर क्या विश्व आर्थिक असमानता को कम करके एक समतामूलक व्यवस्था कायम की जा सकती है।
4. वैश्विक अर्थव्यवस्था की पुनः संरचना किए जाने तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में विशेष रूप से विकासशील देशों की भागीदारी सुनिश्चित करने, ब्रेटनवुड्स सिस्टरस जैसी संस्थाओं का पुनर्गठन किए जाने पर विश्व स्तर पर विकसित और विकासशील राष्ट्रों के बीच की खाई को कम किया जा सकता है।
5. विकासशील राष्ट्र विकास के अपेक्षित आयाम प्राप्त करने में असफल रहे हैं।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र मूलतः द्वितीयक सूचना स्रोतों पर आधारित है हालांकि प्राथमिक स्रोत भी समाहित किए गए है। जब संशोधन स्वतः घटना स्थल पर उपस्थित रहकर अवलोकन, अनुसूची, प्रश्नावली और साक्षात्कार के माध्यम से जानकारी और आंकड़ों का संग्रहण करता है तब इस प्रकार वस्तु और व्यक्ति से उपलब्ध हुई तथ्य सामग्री को प्राथमिक तथ्य सामग्री कहते हैं। द्वितीयक तथ्य सामग्री ऐसी सांख्यिकी जानकारी है जिसे संशोधन प्रकाशित या अप्रकाशित दस्तावेजों, पाण्डुलिपियों, जीवनियों, डायरियों और पत्रों आदि के माध्यम से प्राप्त करता है। इस प्रकार प्राप्त हुई तथ्य सामग्री को भी संशोधन में महत्व प्राप्त है। प्रस्तुत अध्ययन की वस्तुनिष्ठता बनाए रखने के लिए शासकीय और अशासकीय संस्थाओं के द्वारा प्रकाशित/अप्रकाशित दस्तावेज, सांख्यिकी, आदेश, सूचना आदि का उपयोग किया गया है।

नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एवं विश्व बैंक

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् विकसित राष्ट्रों ने आपसी सहयोग द्वारा अपनी बिगड़ी हुई अर्थव्यवस्था को सुधारने का व्यक्तिगत और संस्थागत स्तर पर प्रयास करना शुरू कर दिया था। राजनीतिक क्षेत्र में विश्व शांति हेतु राष्ट्र संघ की स्थापना तथा व्यापार क्षेत्र मे सहयोग हेतु 'गैट' तथा मौद्रिक सहयोग हेतु अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक की स्थापना की गई। परन्तु इनके सदस्य मुख्यतया विकसित राष्ट्र ही थे। वास्तव में, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उपनिवेशवाद की समाप्ति का जो दौर शुरू हुआ, उससे विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में विकासशील राष्ट्रों की सदस्यता बढ़ती गई, किंतु इन संस्थाओं द्वारा वित्तरित की जानेवाली धनराशि किन देशों और किन उद्देश्यों तथा किन शर्तों पर वित्तरित की जाएगी, इन सबका निर्णयकर्ता अमेरिका ही था। अमेरिका समयानुसार अपने आर्थिक और राष्ट्रीय हितों के लिए इन संस्थाओं का इस्तेमाल करता रहा। इस ढांचे में कुछ औद्योगिक राष्ट्रों को विकसित या उत्तर की संज्ञा दी गई। इनके विपरीत वे राष्ट्र थे, जो मुक्त व्यापार के सिद्धांत तथा आपसी स्पर्द्धा में अपने कच्चे माल को सस्ती दरों पर निर्यात करने और स्वयं का कोई औद्योगिक ढाँचा न होने के कारण कमजोर होते चले गये। ये मुख्यतया एशियाई, लैटिन अमेरिकी और अफ्रीकी राष्ट्र हैं, जिन्हें दक्षिण की संज्ञा दी गई।

द्वितीय महा युद्ध के बाद एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के देश स्वतन्त्र होते गए। इन्हें राजनीतिक स्वतन्त्रता तो मिल गयी किन्तु आर्थिक दृष्टि से ये देश वास्तविक रूप में स्वतंत्र नहीं थे। ये देश नव–उपनिवेशवाद के जाल में फंसते चले गये व एक असमानता आधारित अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना हुई, जिसे स्थापित करने का प्रयास ब्रेटनवुड्स में किया

गया था। ब्रेटनवुड्स सम्मेलन का आयोजन अमेरिका, सोवियत संघ, इंग्लैण्ड, फ्रांस और चीन ने मिलकर किया था। सोवियत संघ ने बाद में सम्मेलन का बहिष्कार किया। इस सम्मेलन में प्रस्तावित्त आर्थिक व्यवस्था एक तरह से उत्तर के देशों द्वारा स्वयं के लिए तैयार की गयी अर्थव्यवस्था जिसमें उत्तर–दक्षिण देशों के बीच असमानता एवं निर्भरता के सम्बन्धों को संस्थागत रूप देने के लिए विश्व बैंक व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष मुख्य औजार रहे। जिसके कारण विकासशील देश एक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को स्थापना की मांग करने लगे।

ब्रेटन वुडस सम्मेलन से दो संस्थाएं विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का जन्म हुआ।[9] इन दोनों का कार्य क्षेत्र भिन्न–भिन्न है। विश्व बैंक सदस्य देशों में संतुलित आर्थिक विकास के लिए दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध करवाता है वहीं अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष भुगतान संतुलन में आयी खाई को पाटने हेतु अल्पकालीन ऋण उपलब्ध करवाता है।[10] विश्व बैंक की स्थापना इसलिए की गई ताकि युद्ध के कारण उत्पन्न सदस्य देशों की आर्थिक अव्यवस्था की स्थिति को दूर किया जा सके, जिससे वे प्रगति के पथ पर बढ़ सके।[11] विश्व बैंक की स्थापना से पूर्व एवं इसके पश्चात् जिन संस्थाओं ने इनमें विकास एवं ऋण तथा सहायता का संकल्प लिया, उन्हें विश्व बैंक समूह के नाम सम्बोधित किया जाता है।[13] इस विश्व बैंक समूह में सहयोगी संस्थाओं का समायोजन और उनका विवरण निम्नांकित है –

1. अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ।
2. अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास बैंक।
3. अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम।
4. बहुपक्षीय विनियोग गारंटी अभिकरण।

विश्व बैंक के उद्देश्य

विश्व बैंक एक तरह से अतीत के असंतोष की उपज थी। सभी देशों ने विश्व बैंक को स्वीकार नहीं किया। जैसे सोवियत संघ इसका सदस्य नहीं बना था।[14] सदस्य देशों को आर्थिक पुर्नर्निमाण और विकास कार्य में सहायता देने, अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी निवेश में वृद्धि करने, आर्थिक विकास व निर्धनता में कमी लाने हेतु दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराने, दीर्घकालीन अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन देने, अल्प विकसित व विकासशील राष्ट्रों को तकनीक व आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने, विकासशील देशों में संचालित विभिन्न परियोजनाओं के सफल कि देने व युद्ध पीड़ित राष्ट्रों की जर्जर अर्थव्यवस्थाओं के पुनर्निर्माण एवं विकास हेतु आर्थिक सहायता देने आदि उद्देश्यों को लेकर विश्व बैंक की स्थापना की गयी थी[15]–

विश्व बैंक और विकासशील देश

विकासशील देशों के सामने जनसंख्या वृद्धि एक बहुत बड़ा संकट है जिसके कारण गरीबी, बेराजगार, अशिक्षा, निम्न जीवन स्तर, कुपोषण, शिशु और मातृ मृत्यु दर का बढता हुआ ग्राफ इत्यादि समस्याओं ने जन्म ले लिया है।[16] विकासशील देशों मे प्रतिवर्ष 700 डॉलर से भी कम आय पर अपना जीवनयापन कर रहे हैं, यह चिन्तनीय विषय है। विकसित और विकासशील देशों के बीच इस बढते विभाजन को कम करने के लिए विश्व बैंक द्वारा निःशुल्क स्कूली शिक्षा, स्वास्थ्य केन्द्रों का निर्माण, पानी और बिजली की सुविधाएं, महामारियों से लड़ने के लिए टीकाकरण अभियान जैसे कार्यों के लिए आर्थिक सहायता दी जा रही है।[17]

विश्व बैंक द्वारा ऋणग्रस्त निर्धन देशों के लिए एक विशेष कार्यक्रम का विकास किया है, जिसके तहत कई गरीब देशों का ऋण माफ किया गया है या ऋण अदायगी से राहत प्रदान की गई है। इस बचे हुए पैसे का प्रयोग आधारभूत सुविधाओं रोटी, कपड़ा, शिक्षा, स्वास्थ्य जैसी कल्याणकारी योजनाओं में किया जाता है।[18] विश्व बैंक द्वारा विकासशील देशों के स्वास्थ्य पर काफी पैसा खर्चा किया जा रहा है। फिर टी.बी, एड्स जैसी साध्य बीमारियों से हजारों लोग मौत का शिकार हो जाते है, क्योंकि विकसित और विकासशील देशों व्यापक अंतर है। विश्व बैंक ने HIV/AIDS कार्यक्रम को अपने शीर्ष एजेण्डे में रखा है।[19] वर्तमान में विश्व बैंक द्वारा HIV/AIDS की रोकथाम के लिए लगभग 1.3 अरब डॉलर से भी कहीं अधिक सहायता प्रदान की है।[20]

विश्व बैंक द्वारा दीर्घकालीन योजनाओं के लिए जो ऋण विकासशील और गरीब देशों को दिये जाने के बावजूद भी इनकी स्थिति में कोई विशेष आमूलचूल परिवर्तन नजर नहीं आ रहा है। इसका मुख्य कारण वर्तमान में तेज गति से बढता भ्रष्टाचार हो गया है। विश्व बैंक भी इस समस्या को काफी गंभीरता से ले रहा है।[21]

विश्व बैंक का संगठन

जिन देशों ने 31 दिसम्बर, 1945 तक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की सदस्यता प्राप्त की उन्हीं को विश्व बैंक का मूल सदस्य माना गया।[22] कोई देश दो शर्तों पर विश्व बैंक का सदस्य बन सकता है। प्रथम, उस देश के प्रार्थना पत्र को सदस्यों की मतदान शक्ति के बहुमत द्वारा स्वीकार किया जाए और दूसरे, वह अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य होना चाहिए।[23] यदि कोई सदस्य कोष की सदस्यता से त्याग पत्र देता है तो विश्व बैंक से भी उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है।[24] अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की सदस्यता त्यागने पर भी एक देश को ऐसी स्थिति में बैंक का सदस्य बनाए रखा जा सकता है। विश्व बैंक की सदस्यता सम्बन्धित देश के नियमों के पालन करने तक बनी रहती है।[25]

विश्व बैंक के संसाधनों की सुरक्षा

विश्व बैंक के स्त्रोत की रक्षा करने के लिए निम्न व्यवस्थाएं की गई हैं–

1. विश्व बैंक जिन उद्देश्यों के लिए कर्ज देती है उन्हीं उद्देश्यों के लिए कर्ज का प्रयोग किया जाता है।
2. विश्व बैंक विशेष परिस्थितियों को छोड़कर ऋण पुर्नरचना व विकास के लिए ही देती है।
3. विश्व बैंक कर्ज लेने वाले देश या उसकी गारन्टी देने वाले देश के सम्बन्ध में ध्यान देती है कि वह कर्ज के दायित्वों को निभा सकेगा या नहीं।

विश्व बैंक की कार्य–प्रणाली

विश्व बैंक विकास योजनाओं के लिए ऋण प्रदान करता है। विश्व बैंक कर्ज लेने वाले देश या उसकी गारन्टी देने वाले देश के सम्बन्ध में ध्यान देती है कि वह कर्ज के दायित्वों को निभा सकेगा या नहीं। विश्व बैंक को

यह विश्वास हो जाए कि सदस्य देश ऋण लेने के योग्य है तभी ऋण देती है। विश्व बैंक का सम्बन्ध सदस्य देश की सरकार से रहता है। विश्व बैंक सदस्य देश की गैर–सरकारी संस्था को केवल तभी ऋण प्रदान करता है, जबकि उस देश की सरकार या केन्द्रीय बैंक भुगतान की गारण्टी प्रदान करे। ऋण की राशि को संबंधित देश के केन्द्रीय बैंक में जमा कराया जाता है और ऋण की मात्रा और गारण्टी आदि के निर्धारण का कार्य स्वयं बैंक द्वारा किया जाता है। विश्व बैंक निरीक्षण का भी अधिकार रखता है। विश्व बैंक संचित निधि से अधिक ऋण नहीं दिला सकता है। विश्व बैंक यदि स्वयं गारण्टी देकर ऋण दिलाता है तो उस पर 1 से 1.5 प्रतिशत तक कमीशन लेता है जिसे एक विशेष कोष में जमा किया जाता है। विश्व बैंक अपने कुल योगदान में से केवल 20 प्रतिशत ही उधार दे सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ

विश्व बैंक से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ की स्थापना सितम्बर, 1960 में की गई।[55] अल्पविकसित देशों को परिवहन, विद्युत, संचार, सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण आदि के लिए आसान शर्तों पर ऋण प्रदान करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ की स्थापना की गई।[26] अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ सदस्य देशों को आवास गृहों के निर्माण, पेयजल की आपूर्ति, स्वास्थ्य, चिकित्सा आदि से सम्बन्धित योजनाओं के लिए भी ऋण देता है। यह अविकसित सदस्य देशों के आर्थिक विकास के लिए सस्ता दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराता है।[27] अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ का प्रबन्ध विश्व बैंक का संचालन करने वाले अधिकारियों के हाथों में है, परन्तु आवश्यकतानुसार अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ के लिए पृथक, अधिकारी भी नियुक्त किए जाते हैं।[28]

आर्थिक विकास के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का विशेष कोष

पिछड़े तथा अल्पविकसित देशों को आर्थिक, सामाजिक एवं तकनीकी विकास के लिए यथासम्भव सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र के विशेष कोष की स्थापना जनवरी, 1949 में की गयी थी। संयुक्त राष्ट्र संघ का विशेष कोष का प्रबन्ध संयुक्त राष्ट्र संघ के हाथों में है।[29]

सन्दर्भ साहित्य विश्लेषण

प्रस्तुत सन्दर्भ साहित्य सीमित उपादेयता के उपरान्त भी उपयोगी है एवं विश्लेषणात्मक उपादेयता रखते हैं। अध्ययन हेतु निम्नाकिंत पुस्तकों का प्रारम्भिक रूप से अवलोकन किया गया–

एडम स्नेड द्वारा सम्पादित ''न्यू इन्टरनेशनल इकोनोमिक ऑर्डर इन ग्लोबलाइजेशन एण्ड ऑटोनोमी'' (2005) में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की भूमंडलीकरण के सन्दर्भ में व्याख्या की गई है, जो इस शोध पत्र के लिए महत्वपूर्ण रही।

मेन्जोर सिंह की पुस्तक ''वर्ल्ड ट्रेड ऑग्रेनाइजेशन एण्ड द थर्ड वर्ल्ड'' (2005), मित्तल पब्लिसिंग, नई दिल्ली, में गैट से विश्व व्यापार संगठन की कहानी को बताया गया है। पुस्तक में व्यापार वार्ताओं, उरूग्वे राउंड व उसके परिणाम, व्यापार के भेदभावपूर्ण नियमों, वैश्विक व्यापार में सुधार आदि का वर्णन जो इस शोध पत्र के लिए महत्वपूर्ण रही।

एम. पी. राव. द्वारा सम्पादित, ''द न्यू इन्टरनेशनल इकोनोमिक आर्डर'' (2004) में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के परिचय, विकास, अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास व उपलब्धियों पर व्याख्या की गई है जो उपयोगी रहा है।

गिलपिन–गिलपिन की पुस्तक, 'ग्लोबल पॉलिटिकल इकोनोमीः अण्डरस्टेन्डिग द इण्टरनेशनल इकॉनोमिक आर्डर (2011) (अमेजन डॉट कॉम) नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विस्तरित अध्ययन के कारण उपयोगी रहा है।

नियोल गेस्टन व अहमद एस खालिद द्वारा सम्पादित ''ग्लोबलाईजेशन एण्ड इकोनोमिक इन्टिग्रेसनः विनर्स एण्ड लूजरस इन द एशिया–पेसेफिक'' (2010), में भूमण्डलीकरण पर की गई व्याख्या प्रस्तुत शोध पत्र के लिये महत्वपूर्ण रहा है।

रेफेल व विलियम आर थॉम्पसन की पुस्तक ''नॉर्थ एण्ड साउथ इन द वर्ल्ड पॉलिटिकल इकोनोमी'' (2008) में उत्तर–दक्षिण संवाद पर चर्चा की गई है। विकसित व विकासशील देशों की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति व अर्थव्यवस्था में भूमिका पर भी प्रकाश डाला गया है। यह इस शोध पत्र के लिए उपयोगी रही है।

विलियम आर्थर लेविस की पुस्तक ''दि इवोल्यूशन ऑफ द इन्टरनेशनल इकॉनॉमिक ऑर्डर'', प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस, (2015) में वर्णित विकसित व विकासशील देशों के नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ प्रमुख मुद्दे शोध पत्र में उपयोगी रहे हैं।

निष्कर्ष

अतः यह कहा जा सकता है कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् जिस उदारवादी वैश्विक आर्थिक व्यवस्था का निर्माण अमरीकी नेतृत्व में विकसित देशों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थाओं के माध्यम से किया गया उसी के परिणामस्वरूप नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता महसूस हुई। अर्थात द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् जिस व्यापार व मुद्रा व्यवस्था का निर्माण किया गया वह एक उदारवादी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था का पक्ष पोषण करती है जिसमें इस बात पर बल दिया गया कि वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यस्था में राज्य का हस्तक्षेप सीमित रहेगा। इसमें राष्ट्रीय सीमाओं से दूर वस्तुओं और पूंजी का मुक्त प्रवाह होगा। उक्त व्यवस्था में विश्व बैंक ने अपनी संस्थागत भूमिका का निवेदन किया। इस उदार अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में वैश्विक स्तर पर विकासशील देश, विकसित देशों द्वारा उपेक्षित रहे। ब्रेटनवुड्स संस्थाओं जैसे विश्व बैंक आदि के माध्यम से स्थापित उदारवादी पूंजीवादी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के शोषणकारी, विभेदकारी, अन्यायपूर्ण स्वरूप का अन्त करने के लिए नवीन अन्तर्राष्ट्रीय की आवश्यकता हुई, क्योंकि ब्रेटनवुड्स की विनिमय दर व्यवस्था जो अकारगर सिद्ध हुई है, स्थापित विश्व अर्थव्यवस्था के निर्माण व प्रबंधन के प्रतिरूप माने जाने वाले विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा गैट (वर्तमान में विश्व व्यापार संगठन) में विकासशील देशों की निर्णय क्षमता कमजोर रही है।

वैश्विक वित्तीय संस्थाएँ मिलकर संरचनात्मक समायोजन, बाजार उदारीकरण व निजीकरण को बढ़ावा दे रही थी।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सन् 1974 में नवीन अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की घोषणा से लेकर आज तक इसको व्यवहारिक रूप नहीं मिला। विकासशील देशों ने कितने ही संगठन या समूह निर्मित कर लिए हों, वे विकसित राष्ट्रों के प्रभाव से पूर्णतः मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते। विकासशील राष्ट्र स्वतंत्र आर्थिक विकास की इच्छा रखते हैं, परंतु इस इच्छा का क्रियान्वयन विकसित राष्ट्रों की इच्छा पर निर्भर है। विश्व बैंक द्वारा दीर्घकालीन योजनाओं के लिए जो ऋण विकासशील और गरीब देशों को दिये जाने के बावजूद भी इनकी स्थिति में कोई विशेष आमूलचूल परिवर्तन नजर नहीं आ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *तपन बिस्वाल, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, गुड़गांव, 2013,पृ 183।*
2. *उपर्युक्त, पृ. 183*
3. *उपर्युक्त, पृ. 183*
4. *उपर्युक्त, पृ. 183*
5. *डॉ. जी. वी. नेमा, डॉ. डी. सी. त्रिपाठी– ''भारत एवं विश्व'', प्रकाशक कॉलेज बुक डिपो त्रिपोलिया, जयपुर, 2012, पृ.104।*
6. *उपर्युक्त, पृ. 104*
7. *उपर्युक्त, पृ. 104*
8. *संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज, ए 5559, जी. ए. रेजो. 3201 पूरक एस (टप्) छठा विशेष अधिवेशन 1974*
9. *तपन बिस्वाल, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध, 2013, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, गुड़गांव,पृ 184।*
10. *उपर्युक्त, पृ.184*
11. *डॉ. जी. वी. नेमा, डॉ. डी. सी. त्रिपाठी– ''भारत एवं विश्व'', प्रकाशक कॉलेज बुक डिपो त्रिपोलिया, जयपुर, 2012, पृ.114।*
12. *उपर्युक्त, पृ.114*
13. *प्रतियोगिता दर्पण वार्षिकी, पृ. 222*
14. *एस.सी. सिंहल– समकालीन राजनीतिक मुद्दे, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा 2016,पृ. 51।*
15. *तपन बिस्वाल, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध, मैकमिलन पब्लिशर्स इंडिया लिमिटेड, गुड़गांव, 2013,पृ 187।*
16. *उपर्युक्त, पृ. 187*
17. *उपर्युक्त, पृ. 187*
18. *उपर्युक्त, पृ. 187*
19. *उपर्युक्त, पृ. 187*
20. *उपर्युक्त, पृ. 187*
21. *डॉ. जी. वी. नेमा, डॉ. डी. सी. त्रिपाठी– ''भारत एवं विश्व'', प्रकाशक कॉलेज बुक डिपो, त्रिपोलिया, जयपुर, 2012, पृ.115।*
22. *उपर्युक्त, पृ.115*
23. *उपर्युक्त, पृ.115*
24. *उपर्युक्त, पृ.115*
25. *विकीपीडिया, एन्साइक्लोपीडिया*
26. *विकीपीडिया, एन्साइक्लोपीडिया*
27. *विकीपीडिया, एन्साइक्लोपीडिया*
28. *विकीपीडिया, एन्साइक्लोपीडिया*
29. *विकीपीडिया, एन्साइक्लोपीडिया*